माननीय पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार मे

विविध आपराधिक वाद सं०-34183, वर्ष 2016

उदभव- थाना काड संख्या- 5 वर्ष-1999, थाना- सी.बी.आई. जिला-पटना

==========

छत्रधारी राम, पिता- स्व० बढान मिस्त्री, निवास+मोहल्ला- नुतन नगर, थाना- हजारीबाग, मोफ्फसिल, जिला- हजारीबाग, झारखण्ड।

.....याचिकाकर्ता/गण

बनाम

1. बिहार राज्य
2. सतर्कता (निगरानी) विभाग के अधीक्षक, कार्यालय- सर्पेन्टाइन रोड थाना- सचिवालय, जिला पटना में है।

.....विपक्षीगण

==========

उपस्थिति:

याचिकाकर्ता/ओं के लिए:	विद्वान अधिवक्ता- श्री विकास मोहन
राज्य के लिए:	विद्वान सहायक लोक अभियोजक- श्री चंद्र भूषण प्रसाद
सतर्कता(निगरानी) विभाग के लिए:	विद्वान विशेष लोक अभियोजक- श्री अरविंद कुमार
एमिकस क्यूरी (न्यायमित्र):	विद्वान अधिवक्ता- श्री एस. बी. के. मंगलम,

==========

अधिनियम/धाराएं/नियम:

- *भारतीय दंड संहिता की धाराएं 420, 467, 468, 471, 120 बी और 201*

• भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) सहपठित धारा 13(1) (डी)

संदर्भित मामले:

• आशू सुरेन्द्रनाथ तिवारी बनाम सीबीआई, (2020) 9 एससीसी 636

• राधेश्याम केजरीवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (2011) 3 एससीसी 581

• मोहम्मद नौसाद खान एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य [2023 एससीसी ऑनलाइन पैट 9587]

• सुभाष शर्मा बनाम सरकार। एनसीटी (2024 एससीसी ऑनलाइन डेल 3762

• ममता शैलेश चंद्र बनाम उत्तराखंड राज्य, [2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 136]

• अभिषेक बनाम मध्य प्रदेश राज्य, [एआईआर 2023 एससी 4209]

• थेसीमा बेगम बनाम टी.एन. राज्य, [(2020) 14 एससीसी 580]

• आनंद कुमार मोहत्ता बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली), (2019) 11 एससीसी 706

• जोसेफ साल्वराज ए. बनाम गुजरात राज्य, (2011) 7 एससीसी 59

• जी. सागर सूरी बनाम यू.पी. राज्य, (2000) 2 एससीसी 636

• पेप्सी फूड्स लिमिटेड बनाम विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, (1998) 5 एससीसी 749

• अशोक चतुर्वेदी बनाम शितुल एच. चंचनी, (1998) 7 एससीसी 698

• अरुण शंकर शुक्ला बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (1999) 6 एससीसी 146

• हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल 1992 सप (1) एससीसी 335

***याचिका -** याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत की गई याचिका, जिसमें विशेष न्यायाधीश, सतर्कता द्वारा पारित किए गए उस आदेश के खिलाफ याचिका दायर की गई है, जिसमें याचिकाकर्ता की रिहाई के लिए दायर आवेदन को खारिज कर दिया गया था। न्यायाधीश ने यह पाया कि भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 420, 467, 468, 471, 120B और 201 तथा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) व 13(1)(d) के तहत याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप तय करने के लिए पर्याप्त सामग्री रिकॉर्ड पर है।*

याचिकाकर्ता के खिलाफ विभागीय प्रक्रिया और आपराधिक अभियोग में समान आरोप लगाए गए हैं। याचिकाकर्ता पर आरोप है कि उन्होंने सुपरिंटेंडिंग इंजीनियर के पद पर रहते हुए 15 व्यक्तियों की अवैध नियुक्तियाँ की थीं। विभागीय प्रक्रिया में याचिकाकर्ता को दोषी ठहराने वाली जांच रिपोर्ट और उसके बाद की सजा के आदेश को लिखित न्यायालय ने रद्द कर दिया था, और यह आदेश अपील कोर्ट द्वारा बरकरार रखा गया था, जिसमें अभियोजन को याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोपपत्र की सेवा से विभागीय जांच फिर से शुरू करने की अनुमति दी थी। हालांकि, 16 साल से अधिक समय के बाद भी विभागीय प्राधिकरण ने विभागीय जांच को लिखित न्यायालय के आदेश के अनुसार नहीं किया। याचिकाकर्ता लगभग 26 साल पहले सेवानिवृत्त हो चुका है।

निर्णय - *विभागीय प्रक्रिया में याचिकाकर्ता की निराकरण की कार्यवाही सामर्थ्य पर आधारित है, न कि किसी तकनीकी आधार पर। (पैरा 13)*

विभागीय प्रक्रिया में प्रमाण का मानक केवल संभावना का पूर्वाग्रह है, जबकि आपराधिक प्रक्रिया में अभियोजन को याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप को सभी संभव संदेहों से परे साबित करना आवश्यक है। इस प्रकार, आपराधिक प्रक्रिया में प्रमाण का मानक विभागीय प्रक्रिया की तुलना में बहुत उच्च है। यदि अभियोजन विभागीय प्रक्रिया में संभावना के आधार पर अपना आरोप साबित करने में असफल रहा है, तो यह कहना न होगा कि अभियोजन आपराधिक प्रक्रिया में याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप को सभी संभावित संदेहों से परे साबित करने में विफल होगा। ऐसे में, याचिकाकर्ता को उसके जीवन के अंतिम चरण में आपराधिक प्रक्रिया में सम्मिलित करना एक निरर्थक प्रयास और न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है। (पैरा 14)

अभियुक्त आदेश कानूनी दृष्टिकोण से खड़ा नहीं रह सकता है। इसे प्रक्रिया का दुरुपयोग रोकने और न्याय की दिशा में कार्य करने के लिए धारा 482 सीआरपीसी के तहत रद्द किया जाना चाहिए। यह मामला सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दी गई मार्गदर्शिका से स्पष्ट रूप से संबंधित है। (पैरा 21)

याचिका मंजूर की जाती है। (पैरा 22)

==========

पटना उच्च न्यायलय का निर्णय आदेश

==========

कोरमः माननीय न्यायमूर्ति श्री जितेंद्र कुमार

सीएवी (क्यूरिया एडविसारी वुल्ट) निर्णय

तिथि: 07.01.2025

दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत वर्तमान याचिका याचिकाकर्ता द्वारा 1999 के विशेष मामले संख्या 7 में विशेष न्यायाधीश, सतर्कता-1, (निगरानी) पटना द्वारा पारित किए गए आक्षेपित आदेश दिनांक 01.07.2016 के खिलाफ दायर की गई है, जिसमें याचिकाकर्ता के आरोपमुक्त करने के आवेदन को इस मन्तव्य के साथ कि याचिकाकर्ता पर भारतीय दंड संहिता की धारा 420,467,468,471,120 बी और 201 और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13 (1) (डी) के साथ पठित धारा 13 (2) के तहत आरोप गठन हेतु पर्याप्त सामग्री है, खारिज कर दिया गया है

2. आरोप के अनुसार, याचिकाकर्ता ने सार्वजनिक स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग, बिहार, पटना में अधीक्षण अभियंता के पद पर रहते हुए नियमों और विनियमों का पालन किए बिना अवैध नियुक्तियां और पदोन्नति की है। याचिकाकर्ता दिनांक-31.01.1998 को अधीक्षण अभियंता के रूप में सेवानिवृत्त हुए और दिनांक-08.05.2000 को विभागीय कार्यवाही शुरू की गई। जाँच रिपोर्ट के अनुसार, याचिकाकर्ता को 15 व्यक्तियों की अवैध नियुक्तियों का दोषी पाया गया था। हालाँकि, जाँच रिपोर्ट से उत्पन्न होने वाले निष्कर्ष और सजा के खिलाफ, याचिकाकर्ता ने 2000 के सी०डब्लू०जे०सी० संख्या 13390 के माध्यम से रिट अधिकार क्षेत्र के तहत इस न्यायालय का रुख किया, जिसमें विद्वान रिट कोर्ट ने दिनांक-31.01.2008 के आदेश के द्वारा दिनांक- 24.07.2000 की जाँच रिपोर्ट और उसके

परिणामस्वरूप 30.11.2000 के सजा के आदेश को दरकिनार कर दिया, जिसमें पाया गया कि जाँच अधिकारी का पूरा निष्कर्ष आरोप के समर्थन में प्रासंगिक दस्तावेजों की आपूर्ति करने में विभाग की विफलता को देखते हुए विकृत था। विद्वान रिट न्यायालय ने मामले को नई जांच के लिए वापस भेजने के लिए विभाग की प्रार्थना को भी खारिज कर दिया, क्योंकि विद्वान रिट न्यायालय ने याचिकाकर्ता को जीवन के इस चरण में उत्पीड़न के लिए उजागर करना उचित नहीं समझा। माननीय रिट न्यायालय के दिनांक-31.01.2008 के आदेश को 2008 के एल. पी. ए. संख्या 687 में चुनौती दी गई थी, जिसमें विद्वान एल. पी. ए. न्यायालय ने दिनांक-26.11.2008 के आदेश के माध्यम से विद्वान रिट न्यायालय के आदेश को विधिसम्मत ठहराते हुए बरकरार रखा, हालांकि एल. पी. ए. न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि राज्य सरकार के द्वारा याचिकाकर्ता के खिलाफ अनुशासनात्मक जांच आरोप ज्ञापन दिनांक-08.06.2000 के चरण से आगे बढ़ाने मे कोई बाधा नहीं होगी।

3. मैंने याचिकाकर्ता के विद्वान वकील, विद्वान न्यायमित्र और सतर्कता (निगरानी) विभाग के विद्वान वकील को सुना।

4. याचिकाकर्ता के विद्वान न्यायमित्र और विद्वान वकील ने तर्क प्रस्तुत किया कि जिस आक्षेपित आदेश के तहत याचिकाकर्ता के आरोपमुक्त करने के आवेदन को खारिज कर दिया गया है, वह कानून की नजर में टिकाऊ नहीं है।

5. अपनी दलीलों को साबित करने के लिए, वे तर्क प्रस्तुत करते हैं कि अभियोजन उसी तथ्यों के आधार पर शुरू किया गया है जो विभागीय कार्यवाही के हैं जिसमें याचिकाकर्ता रिट और एल. पी. ए. न्यायालयों के आदेश के बाद दोषमुक्त हो जाता है। वे आगे प्रस्तुत करते हैं कि विभागीय कार्यवाही में सबूत का मानक केवल संभावना की प्रधानता (प्रायिक्ता की प्रबलता) है, जबकि आपराधिक मुकदमे में सबूत का मानक बहुत उँचा है क्योंकि अभियोजन पक्ष को तर्क संगत संदेह से परे सबूत द्वारा आरोप साबित करने की

आवश्यकता होती है। यदि राज्य विभागीय कार्यवाही में संभावना की प्रधानता (प्रायिक्ता की प्रबलता) के मानक को पूरा करने में विफल रहा है, तो राज्य के आपराधिक मुकदमे में तर्क संगत संदेह से परे अपने मामले को साबित करने का कोई सवाल ही नहीं है। इसलिए, याचिकाकर्ता के खिलाफ आपराधिक मुकदमे का परिणाम पूर्व निष्कर्ष है और इसलिए, याचिकाकर्ता को अपने जीवन के अंतिम चरण में इस तरह की आपराधिक कार्यवाही के अधीन करना अत्यधिक अनुचित होगा। वे निम्नलिखित निर्णयों का भी उल्लेख करते हैं और उन पर भरोसा करते हैं।

(i) आशू सुरेंद्रनाथ तिवारी बनाम सी. बी. आई., (2020) 9 एस. सी. सी. 636

(ii) राधेश्याम केजरीवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (2011) 3 एस. सी. सी. 581

6. हालांकि, सतर्कता (निगरानी) विभाग के विद्वान वकील ने इस आक्षेपित आदेश का जोरदार समर्थन करते हुए कहा कि याचिकाकर्ता के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही में चरण (अवस्था) के बदलाव को देखते हुए वर्तमान याचिका फलहीन (निरूउदेश्य) हो गई है। अभियोग पहले ही तैयार किया जा चुका है और सतर्कता (निगरानी) विभाग द्वारा याचिकाकर्ता के खिलाफ सबूत पेश किए जा रहे हैं।

7. वह आगे तर्क प्रस्तुत करता है कि याचिकाकर्ता को विद्वान माननीय रिट कोर्ट द्वारा योग्यता के आधार पर दोषमुक्त नहीं किया गया है। केवल तकनीकी आधार पर रिट कोर्ट ने जांच रिपोर्ट और सजा के आदेश को दरकिनार कर दिया है। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि एल. पी. ए. में, इस अदालत ने स्पष्ट किया है कि राज्य सरकार को आवेदक की सेवा की अवस्थाओं (चरणों) में आरोप विवरणी (आरोप-ज्ञापन) के अनुसार कार्यवाही करने से प्रतिबंधित नहीं किया गया है। जिसका अर्थ है कि विद्वान रिट न्यायालय द्वारा याचिकाकर्ता का दोषमुक्त होना केवल अस्थायी है और उसे एक नई जांच में दोषी पाया जा सकता है। अतः वह विद्वान रिट न्यायालय के आदेश का लाभ नहीं उठा सकता है।

8. जवाब के माध्यम से, याचिकाकर्ता के विद्वान न्यायमित्र और विद्वान वकील का कहना है कि रिट कोर्ट ने मामले की योग्यता पर चर्चा की है और पाया है कि याचिकाकर्ता की लगातार उन दस्तावेजों की मांग के बावजूद, जिन पर राज्य सरकार ने आरोप के समर्थन में भरोसा किया था, उन्हें उपलब्ध नहीं कराया गया था और इसलिए, जांच रिपोर्ट का निष्कर्ष विकृत पाया गया था। वे आगे प्रस्तुत करते हैं कि एल. पी. ए. अदालत द्वारा स्पष्टीकरण के बावजूद कि राज्य सरकार आरोप पत्र/आरोप ज्ञापन के चरण से आगे बढ़ सकती है, राज्य सरकार ने लगभग 16 साल बीतने के बाद भी आज तक आगे की जांच के लिए आगे बढ़ना पसंद नहीं किया है, जिसका अर्थ है कि विद्वान रिट अदालत द्वारा जांच रिपोर्ट और सजा के आदेश को दरकिनार करना और विद्वान एल. पी. ए. अदालत द्वारा बरकरार रखा जाना निरपेक्ष हो गया है और याचिकाकर्ता योग्यता के आधार पर आरोप से बरी हो गया है।

9. वह यह भी तर्क प्रस्तुत किया है कि निम्न न्यायालय में चरण के परिवर्तन से दण ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत दाखिल आवेदन निरूउदेश्य (फलहीन) नहीं हो गया है। वह संदर्भित करता है और निर्भर करता है **मो० नौसाद खान और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य** [2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन पैट 9587 III (2024) डी. एम. सी. 55 (डी. बी.) (पैट), 2024 (4) बी. एल. जे. 202, एम. ए. एन. यू./बी. एच./2037/2023]।

10. मैंने पक्षों की प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचारपूर्वक विचार किया और अभिलेख पर सामग्री का अवलोकन किया।

11. इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ विभागीय कार्यवाही के साथ-साथ आपराधिक अभियोजन में भी समान आरोप हैं। याचिकाकर्ता पर सार्वजनिक स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग, बिहार में अधीक्षण अभियंता के पद पर रहते हुए 15 व्यक्तियों की अवैध नियुक्तियां करने का आरोप लगाया गया है। यह भी विवाद में नहीं है

कि याचिकाकर्ता को विभागीय कार्यवाही में दोषी पाए जाने वाली 24.07.2000 की जांच रिपोर्ट और दिनांक 30.11.2000 के दंड के परिणामी आदेश को विद्वान रिट कोर्ट द्वारा सी०डब्लू०जे०सी० 2000 की संख्या 13390 दिनांक 24.07.2000 में दरकिनार कर दिया गया है और इसे विद्वान एल. पी. ए. अदालत द्वारा 2008 की एल. पी. ए. संख्या 687 में दिनांक 26.11.2008 के आदेश द्वारा बरकरार रखा गया है, जिसमें अभियोजन पक्ष को दिनांक 08.05.2000 के आरोप ज्ञापन की सेवा के चरण से याचिकाकर्ता के खिलाफ अनुशासनात्मक जांच के साथ आगे बढ़ने की स्वतंत्रता दी गई है। हालाँकि, याचिकाकर्ता का दावा है कि 16 साल बीतने के बाद भी अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने विद्वान माननीय एल. पी. ए. न्यायालय के संदर्भ में अनुशासनात्मक जांच के साथ अनुशासनात्मक कार्यवाही नहीं कि है। यह भी अभिलेख पर है कि याचिकाकर्ता लगभग 26 साल पहले 31.01.1998 को सेवानिवृत्त हुआ है।

12. इस प्रकार, यह अभियोजन पक्ष का मामला नहीं है कि उसने दिनांक 08.05.2000 के आरोप ज्ञापन के चरण से अनुशासनात्मक जांच के साथ नए सिरे से आगे बढ़ा है। इस प्रकार, विद्वान माननीय रिट न्यायालय के संदर्भ में विभागीय कार्यवाही में याचिकाकर्ता का दोषमुक्ति और विद्वान माननीय एल. पी. ए. न्यायालय द्वारा बरकरार रखा जाना निरपेक्ष हो जाता है। यह भी पाया गया है कि विद्वान माननीय रिट अदालत ने विभागीय कार्यवाही में याचिकाकर्ता के अपराध के निष्कर्ष को 15 व्यक्तियों की अवैध नियुक्तियों के आरोप के समर्थन में विभागीय कार्यवाही में किसी भी दस्तावेज के अभाव में विकृत माना है।

13. इस प्रकार, मैं पाता हूँ कि विभागीय कार्यवाही में याचिकाकर्ता को दोषमुक्त करना योग्यता के आधार पर है न कि किसी तकनीकी आधार पर।

14. अब यह बिना कहे चला जाता है कि विभागीय कार्यवाही में सबूत का मानक केवल संभावना की प्रधानता (प्रायिक्ता की प्रबलता) है, जबकि आपराधिक कार्यवाही में, अभियोजन पक्ष को याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप को सभी तर्क संगत संदेहों से परे साबित करने की आवश्यकता होती है। अतः आपराधिक कार्यवाही में सबूत का मानक विभागीय कार्यवाही की तुलना में बहुत अधिक उँचा है। यदि अभियोजन पक्ष संभाव्यता की प्रधानता (प्रायिक्ता की प्रबलता) के मानक के अनुसार अपने आरोप को साबित करने में विफल रहा है, तो यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि अभियोजन पक्ष याचिकाकर्ता के खिलाफ सभी उचित तर्क संगत संदेहों से परे आपराधिक कार्यवाही में अपने आरोप को साबित करने में विफल रहा है। ऐसी स्थिति में, याचिकाकर्ता को अपने जीवन के अंतिम चरण में आपराधिक कार्यवाही के अधीन करना व्यर्थ की कवायद और अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग है।

15. इस न्यायालय की उपरोक्त राय में पाया गया है कि **राधेश्याम केजरीवाल (उपरोक्त)** मामले से निर्वाह, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कई उदाहरणों का उल्लेख करने के बाद निम्नलिखित निर्णय दिया हैः

> "**38.** इन निर्णयों से जो अनुपात निकाला जा सकता है, उसे मोटे तौर पर निम्नानुसार कहा जा सकता हैः
>
> (I) न्यायनिर्णयन कार्यवाही और आपराधिक अभियोजन एक साथ शुरू किया जा सकता है।
>
> (ii) आपराधिक अभियोजन शुरू करने से पहले न्यायिक कार्यवाही में निर्णय लेना आवश्यक नहीं है।
>
> (iii) न्यायनिर्णयन कार्यवाहियाँ और आपराधिक कार्यवाहियाँ एक दूसरे के लिए स्वतंत्र (पृथक) प्रकृति की होती हैं।

(iv) न्यायनिर्णयन की कार्यवाही में अभियोजन का सामना करने वाले व्यक्ति के खिलाफ निष्कर्ष आपराधिक अभियोजन की कार्यवाही पर बाध्यकारी नहीं है।

(v) प्रवर्तन निदेशालय द्वारा निर्णय की कार्यवाही संविधान के अनुच्छेद 20 (2) या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 के प्रावधानों को आकर्षित करने के लिए किसी सक्षम अदालत द्वारा अभियोजन नहीं है;

(vi) समान उल्लंघन के लिए मुकदमे का सामना करने वाले व्यक्ति के पक्ष में निर्णय कार्यवाही में निष्कर्ष मामले की प्रकृति पर निर्भर करेगा। यदि न्यायनिर्णयन कार्यवाहियों में दोषमुक्ति तकनीकी आधार पर है और योग्यता पर नहीं है, तो अभियोजन जारी रह सकता है; और

(vii) हालांकि, दोषमुक्ति के मामले में, गुण-दोष के आधार पर जहां आरोप बिल्कुल भी टिकाऊ नहीं पाया जाता है और व्यक्ति को निर्दोष ठहराया जाता है, तथ्यों और परिस्थितियों के एक ही सेट पर आपराधिक अभियोजन जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, अंतर्निहित सिद्धांत आपराधिक मामलों में सबूत का उच्च मानक है।

39. इसलिए, हमारी राय में, यह निर्णय करने का पैमाना होगा कि क्या न्यायनिर्णयन कार्यवाही के साथ-साथ अभियोजन की कार्यवाही में आरोप समान है और न्यायनिर्णयन कार्यवाही में संबंधित व्यक्ति को दोषमुक्त करना गुण-दोष पर आधारित है। यदि योग्यता के आधार पर यह पाया जाता है कि न्यायनिर्णयन की कार्यवाही में अधिनियम के प्रावधानों का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है, तो संबंधित व्यक्ति का मुकदमा अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। "

(जोर दिया गया)

16. राधेश्याम केजरीवाल (उपरोक्त) मामले का अनुपात माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भी **आशू सुरेंद्रनाथ तिवारी (उपरोक्त)** मामला अभियुक्त को आरोपमुक्त करने के लिए, निम्नलिखित रूप में धारण किया।

> "**15.** उपरोक्त निर्णयों को इस मामले के तथ्यों पर लागू करते हुए, यह स्पष्ट है कि दिनांकित- 22.12.2011 सी. वी. सी. के विस्तृत आदेश को देखते हुए, समान तथ्यों वाले आपराधिक मुकदमे में दोषसिद्धि की संभावना धूमिल प्रतीत होती है। इसलिए, हम उच्च न्यायालय और विशेष न्यायाधीश के फैसले [*आशू सुरेंद्रनाथ तिवारी बनाम सी. बी. आई.*, 2014 एस. सी. सी. ऑनलाइन बम 5042] को दरकिनार करते हैं और अपीलार्थी को दंड संहिता के तहत अपराधों से मुक्त करते हैं। "

17. दिल्ली उच्च न्यायालय ने भी इसी तरह का विचार रखा है। **सुभाष शर्मा बनाम एन. सी. टी. सरकार (2024 एस. सी. सी.) ऑनलाइन डेल 3762** इस प्रकार हैः

> "**26.** कानूनी स्थिति जो उभरती है वह यह है कि यदि किसी अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया गया है और आरोपों को अस्थिर (टिकाउ नहीं) पाए जाने के बाद अनुशासनात्मक कार्यवाही में निर्दोष ठहराया गया है, तो आरोपों के एक ही सेट (समानता) पर आधारित आपराधिक अभियोजन को जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। उपरोक्त निर्णयों में स्पष्ट किया गया है कि आपराधिक मामलों में सबूत का मानक तर्क संगत 'उचित संदेह से परे' है जो 'संभावना की प्रधानता' से कहीं अधिक है, जो अनुशासनात्मक कार्यवाही में आवश्यक सबूत का मानक है। यदि अनुशासनात्मक कार्यवाही में निचली सीमा को पूरा नहीं किया जा सका, तो

आपराधिक कार्यवाही का मुकदमा चलाने का कोई उद्देश्य नहीं है जहां अपराध को स्थापित करने के लिए आवश्यक सबूत का मानक अधिक है।

27. अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोपों की विश्वसनीयता और वास्तविकता का परीक्षण पहले ही किया जा चुका है और याचिकाकर्ता को ऐसे आरोपों से बरी कर दिया गया है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, अनुच्छेद-I में निहित आरोप पर जांच अधिकारी, अनुशासनात्मक प्राधिकरण के साथ-साथ यू. पी. एस. सी. के निष्कर्ष, जो एफ. आई. आर. संख्या 55/2014 से उत्पन्न आपराधिक मामले में आरोपों के समान हैं, समवर्ती हैं। इस पृष्ठभूमि में वर्तमान मामले को निर्विवाद रूप से भजन लाल के पारा 102 के उप-पैरा (5) के साथ पठित उप-पैरा (3) के तहत लाया जा सकता है। *भजन लाल* (ऊपर)।

28. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान मामला एक उपयुक्त मामला है जो इस न्यायालय द्वारा प्राथमिकी और बाद की आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करने की गारंटी देता है।

29. तदनुसार, वर्तमान याचिका की अनुमति दी जाती है और परिणामस्वरूप, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराओं 7/13 के तहत पीएस ए. सी. बी., नई दिल्ली में दर्ज प्राथमिकी संख्या-55/2014, दिनांक-11.07.2014 और उससे उत्पन्न होने वाली अन्य सभी कार्यवाही को रद्द कर दिया जाता है। "

18. सतर्कता (निगरानी) विभाग के विद्वान वकील के निवेदन पर आते हुए कि नीचे दिए गए न्यायालय में कार्यवाही का चरण बदल गया है और इसलिए, वर्तमान याचिका

फलहीन (निरूउदेश्य) हो गई है, मोहम्मद नौशाद खान वाद को संदर्भित करना प्रासंगिक होगा। **नौशाद खान मामला (उपरोक्त)**, जिसमें इस न्यायालय ने निम्नलिखित बाध्यकारी उदाहरणों का उल्लेख करने के बाद इस मुद्दे पर विस्तार से विचार किया हैः

(i) **ममता शैलेश चंद्र बनाम उत्तराखंड राज्य,**

[2024 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 136]

(ii) **अभिषेक बनाम मध्य प्रदेश राज्य। ,**

[ए.आई.आर 2023 एस.सी. 4209]

(iii) **थेसिमा बेगम बनाम टी. एन. राज्य,**

[(2020) 14 एस.सी.सी. 580]

(iv) **आनंद कुमार मोहत्ता बनाम राज्य (एन. सी. टी. दिल्ली),**

(2019) 11 एस.सी.सी. 706

(v) **जोसेफ साल्वराज ए. बनाम गुजरात राज्य,**

(2011) 7 एस.सी.सी 59

(vi) **जी. सागर सूरी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,**

(2000) 2 एस.सी.सी. 636

(vii) **पेप्सी फूड्स लिमिटेड बनाम.विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट,**

(1998) 5 एस.सी.सी. 749

(viii) **अशोक चतुर्वेदी बनाम शितुल एच. चंचानी,**

(1998) 7 एस.सी.सी. 698

(ix) **अरुण शंकर शुक्ला बनाम उत्तर प्रदेश राज्य**

(1999) 6 एस.सी.सी. 146

19. उपरोक्त उदाहरणों पर विचार करने के बाद, इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया हैः

"**19.** इस प्रकार, यह सामने आता है कि उच्च न्यायालय के पास मुकदमे के चरण में बदलाव के बाद भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत दायर याचिका पर विचार करने और कार्रवाई करने की शक्ति बनी हुई है। धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता में शक्ति के प्रयोग को प्रतिबंधित करने के लिए कुछ भी नहीं है जब तक कि कार्यवाही का चरण वही रहता है जो याचिका के समय था। यह अभिनिर्धारित करना न्याय का उपहास होगा कि व्यक्ति के खिलाफ शुरू की गई कार्यवाही को उसके अगले चरण में पहुंचने पर हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है, भले ही अदालत की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने और न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए हस्तक्षेप की आवश्यकता हो। याचिकाकर्ता को आपराधिक मुकदमे की पीड़ा और पीड़ा के अधीन करना गंभीर अन्याय होगा। उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति को न्याय को आगे बढ़ाने के लिए बचाया गया है न कि इसे विफल करने के लिए।

20. हालाँकि, जब मुकदमा निर्णय के चरण में पहुँच जाता है, तो याचिका पर कार्रवाई करना वांछनीय नहीं है। निर्णय के बाद, याचिकाकर्ता को अपील दायर करने की स्वतंत्रता होगी जिसमें वह कानून और तथ्यों के सभी बिंदुओं को उठा सकता है।

21. इस प्रकार, राज्य और मुखबिर (सूचक) की ओर से यह निवेदन कि वर्तमान याचिका फलहीन (निरूउदेश्य) हो गई है। क्योंकि विचारण की

अवस्था में परिवर्तन हो गया है, स्वीकार नहीं किया जा सकता। यह न्यायालय याचिका पर विचार करने और उस पर कार्रवाई करने के लिए कर्तव्यबद्ध है, भले ही मुकदमा अभियोजन पक्ष के साक्ष्य के चरण में पहुँच गया हो। "

20. इसलिए, यह न्यायालय सतर्कता (निगरानी) विभाग के विद्वान वकील की दलीलों से सहमत होने में असमर्थ है कि निम्न न्यायालय में चरण के परिवर्तन के बाद, धारा 482 दंण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत वर्तमान कार्यवाही फलहीन हो गई है।

21. उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, मैं पाता हूं कि आक्षेपित आदेश कानून की नजर में टिकाऊ नहीं है। न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने और न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इसे धारा 482 दंण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत खारिज करने योग्य है। यह मामला हरियाणा राज्य के पैरा 102 के उप-पैरा 3 और 5 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए दिशानिर्देशों द्वारा पूरी तरह से कवर (आवृत) किया गया है। **हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल 1992 सप्लीमेंट (1) एस.सी.सी. 335। भजन लाल वाद (उपरोक्त)** का प्रासंगिक पैरा इस प्रकार हैः

"**102.** अध्याय XIV के तहत संहिता के विभिन्न प्रासंगिक प्रावधानों की व्याख्या और अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण शक्ति के प्रयोग या संहिता की धारा 482 के तहत अंतर्निहित शक्तियों से संबंधित निर्णयों की एक श्रृंखला में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कानून के सिद्धांतों की पृष्ठभूमि में, हम निम्नलिखित श्रेणियों के मामलों को उदाहरण के रूप में देते हैं, जिसमें ऐसी शक्ति का प्रयोग या तो किसी भी अदालत की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए किया जा सकता है, हालांकि किसी भी सटीक, स्पष्ट रूप से

परिभाषित और पर्याप्त रूप से व्यवस्थित और लचीले दिशानिर्देशों को निर्धारित करना संभव नहीं हो सकता है। कठोर सूत्र और एक विस्तृत एवं असंख्य प्रकार के मामलों की सूची जिसमें इस तरह की शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए।

.....

(3) जहां प्रथम इत्तिला रिपोर्ट या परिवाद में किए गए अभिकथन और उसके समर्थन में एकत्र किए गए साक्ष्य किसी अपराध के किए जाने का खुलासा नहीं करते हैं और न ही अभियुक्त के विरुद्ध मामला बनाते हैं।

.....

(5) जहां प्रथम सूचना प्रतिवेदन या शिकायत में लगाए गए आरोप इतने बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं कि उनके आधार पर कोई भी विवेकशील व्यक्ति कभी भी इस न्यायसंगत निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है।

....."

22. तदनुसार, वर्तमान याचिका को अनुमति दी जाती है। विशेष न्यायाधीश, सतर्कता-I, (निगरानी प्रथम) पटना द्वारा पारित 1999 का विशेष मामला संख्या 07 से उत्पन्न मामले के दिनांक 01.07.2016 के आक्षेपित आदेश को निरस्त किया जाता है और याचिकाकर्ता को आरोपमुक्त किया जाता है। 1999 के विशेष मामला सं. 07 से उत्पन्न पूरी कार्यवाही निरस्त की जाती है।

(जितेंद्र कुमार, न्यायामूर्ति)

शोएब/रमेश

खण्डन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।